ओम प्रकाश शर्मा उर्फ ओ.पी.जोशी

बनाम

राजेंद्र प्रसाद शेवदा और अन्य

(सिविल अपील संख्यायें 8609-8610/2009)

09 अक्टूबर, 2015

(रंजन गोगोई और एन.वी. रमन्ना न्यायाधिपति)

हिंदू कानूनः संपत्ति विवाद - पति द्वारा पत्नी के नाम संपत्ति की खरीद-न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया - इस मामले में पति द्वारा अर्जित निधि से अपनी पत्नी के लाभार्थ संपत्ति क्रय की गई थी इसलिए पत्नी संपत्ति की वास्तविक स्वामी थी - यह लंबे समय से चली आ रही इस प्रथा के अनुरूप था कि सामान्यतः पति द्वारा पत्नी की संपत्ति की देखरेख एवं प्रबंधन किया जाता है -बेनामी संव्यवहार - हिन्दू महिलाआेंं का संपत्ति का अधिकार अधिनियम, 1937 ।

दत्तक ग्रहणः वादी द्वारा संपत्ति पर इस आधार पर दावा किया जाना कि उक्त संपत्ति उसके पति से उसे प्राप्त हुई है, जिसे कि संपत्ति के स्वामी द्वारा दत्तक के रूप में ग्रहण किया गया था - प्रतिवादी संख्या 01 संपत्ति के भूस्वामी की पुत्री का दत्तक पुत्र था - दत्तक ग्रहण के संबंध में विवाद - निधार्रण - वादी यह साबित करने में असफल रहा है कि उसका दत्तक ग्रहण वैध था - गवाहों के कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(5) एवं

(6) के अनुसार नहीं थे क्योंकि जिस दिन उक्त साक्ष्य लेखबद्ध की गई थी उससे पूर्व ही दत्तक ग्रहण के संबंध में विवाद उत्पन्न हो चुका था - अगर वादी स्वयं को गोद लिया जाना साबित करने में असफल रहता है तब यह निधार्रित किया जाना चाहिए था कि वाद संपत्ति का भूस्वामी की पुत्री के पक्ष में न्यायगत हुआ है। प्रतिवादी संख्या 01 का गोद गया हुआ पुत्र होने को केवल उन्हीं कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा चुनौती दी जा सकती है, जिनके पक्ष में प्रतिवादी संख्या 01 का दत्तक पुत्र होना विफल होने पर संपत्ति का न्यायगत होती हो-ऐसी कोई चुनौती नहीं दी गई - उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिवादी संख्या 01 को गोद दिये जाने की वैधता के विवाद को विचार नहीं करना न्यायसंगत है क्योंकि ऐसा विवाद अनावश्यक था -साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 32(5) और (6)

ओम प्रकाश शर्मा उर्फ ओ.पी.जोशी बनाम राजेंद्र प्रसाद शेवदा और अन्य 575

अपील को अस्वीकार करते हुए न्यायालय द्वारा।

अभिनिर्धारित किया गया-1 पति द्वारा अपनी पत्नी के नाम से संपत्ति क्रय किया जाना बेनामी क्रय की वह शाखा है जो लंबे समय से भारत में प्रचलित प्रथा है। ऐसी प्रथा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम एवं इसमें समय-समय पर किये गए संशोधनों तक हिन्दू महिला के उत्तराधिकार की स्थिति को देखते हुए प्रचलित होना प्रकट है। इस स्थित में जहां हिन्दू विधवा के उसके मृतक पति की संपदा पर हिन्दू महिला के संपत्ति पर अधिकार

अधिनियम, 1937, के प्रावधानानुसार सीमित अधिकार रहे हैं, पति द्वारा अपनी पत्नी के नाम उसके जीवन को पति की मृत्यु के बाद सुरक्षित करने हेतु अचल संपत्ति क्रय किया जाना भारतीय जीवन में स्वीकृत एवं अभिस्वीकृत रहा है, जिसको बेनामी अंतरण (निषेध) अधिनियम, 1988 की उपधारा 3 के स्पष्टीकरण से भी पहचाना गया है। उच्च न्यायालय का इस निष्कर्ष पर पहुंचना कि हालांकि संपत्ति पति की निधि से क्रय की गई थी परन्तु उक्त संपत्ति उसकी विधवा के वास्तविक लाभ हेतु क्रय की गई थी इसलिए वह संपत्ति की वास्तविक स्वामिनी थी, पूर्णतः न्यायोचित था। यह तथ्य कि हिन्दू परिवार में प्रचलित प्रथा के अनुसार संपत्ति का प्रबधंन पति द्वारा किया जाता है, जिसके अनुसार ही पति द्वारा संपत्ति की देखरेख एवं प्रबंधन किया जा रहा था, भी सुसंगत परिस्थिति है, जिसके आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष दिया गया है कि उजागर हुए तथ्य पूर्णर्तः संपत्ति पर विधवा के स्वामित्व की पुष्टि करते हैं। (पैरा 10, 12) (581-ई-जी; 584-डी-एच)

2. वादिया एवं पी.डब्ल्यू-2 वे साक्षी रहे हैं जिन्होंने उसके पति द्वारा दत्तक लिए जाने के दावे के पक्ष में कथन किए हैं। विशिष्ठतः पी.डब्ल्यू-2 ने हालांकि कहा है कि वादिया के पति का दत्तक ग्रहण 40 साल पूर्व किया गया था परन्तु वह स्वयं की आयु याद नहीं कर सकी है; उसे यह भी याद नहीं है कि दत्तक ग्रहण से कितने वर्ष पूर्व उसका विवाह हुआ था, उसके पुत्रों का विवाह कब हुआ था, यह भी बहुत आश्चर्यजनक है। वह अपने बड़े

पुत्र के विवाह के समय उसकी आयु क्या रही है, अपने बड़े पुत्र की वर्तमान आयु और वर्तमान वर्ष भी याद करने में असफल रही है। तीनों गवाहों के कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(5) एवं (6) के अनुसार साक्ष्य में ग्राह्य नहीं है क्योकि जिस दिन उनके कथन लेखबद्ध किये गए तब तक वादिया के पति के दत्तक ग्रहण के संबंध में

सुप्रीम कोर्ट रिपोर्टस [2015] 10 एस सी और 576

विवाद उत्पन्न हो गया था। प्रतिवादी संख्या 1 का मूल स्वामी की पुत्री का दत्तक पुत्र होने के दावे को केवल उन्हीं विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा चुनौती दी जा सकती है, जिनके पक्ष में उसकी मां की मृत्यु होने की स्थिति में संपत्ति हस्तांतरित हो जाती। इस संदर्भ में, प्रतिवादी संख्या 1 को गोद लिए जाने को अमान्य माने जाने पर जिस उत्तराधिकारी के पक्ष में संपत्ति का अंतरण होता वह मूल वादिया नहीं होती क्योेंकि ऐसी परिस्थिति में उससे बेहत्तर हक वाला उत्तराधिकारी मौजूद था। उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 को गोद लेने की वैधता के मुद्दे या उसके पक्ष में निष्पादित उपहार विलेख को उक्त मुद्दों के रूप में दर्ज न करना उपरोक्त उल्लेखित कारणों से निरर्थक/अप्रत्याशित हो जाने से पूरी तरह से उचित था। (पैरा 17,19 से 21)(587-एफ; 588-सी-ई;589-जी-एच;590-ए-सी)

संदर्भित-

जयदयाल पौदार (मृतक) जरिए एल.और.एस व अन्य बनाम एम.एस.टी बीवी हजरा व अन्य, ए.औई.और. 1974 एस.सी. 171: 1974(1) एस.सी.और 70; बिनापानी पाैल बनाम प्रतिमा घोष व अन्य 2007(5)एस.सी.और 946: 2007(6) एससीसी 100; कनकराथनाम्मल बनाम एस.लोगान्था मुदालियर और अन्य ए.औई.और 1965 एस.सी 271: 1964 एससीऔर 1; रहासा पंडियनी जरिये एल.और.एस. और अन्य बनाम गोकुलनंदा पंडा व अन्य ए.औई.और 1987 एस.सी 962; कालिन्दीं वैंकटा सुबराजू व अन्य बनाम चिंतालापति बनाम सुबराजू व अन्य ए.आई.और 1968 एस.सी 1968 एससीऔर 292

प्रकरण में संदर्भित विधि

1974 (1) एससीऔर 70 विश्वास किया पैरा 10

2007 (5) एससीऔर 946 विश्वास किया पैरा 11

1964 एससीऔर 1 विश्वास किया पैरा 12

एआईऔर 1987 एससी 962 विश्वास किया पैरा 15

1968 एस सी और 292 विश्वास किया पैरा 19

ओम प्रकाश शर्मा उर्फ ओ.पी.जोशी बनाम राजेंद्र प्रसाद शेवदा और अन्य 577

(रंजन गोगोई न्यायाधिपति)

सिविल अपील क्षेत्राधिकार : सिविल अपील संख्याएं 8609-8610/2009

कलक्त्ता उच्च न्यायालय द्वारा एफ.ए. संख्या 160/1992 सीआेटी संख्या 878/1996 में पारित निर्णय व आदेश दिनांक 04.11.2008

प्रणब कुमार मुलिक अपीलार्थी की ओर से।

एम.एन.कृष्णामणी, रंजन मुखर्जी, अभिजीत सेन गुप्ता,

दिब्या दयूति बनर्जी, कोनार्क त्यागी, प्रतिवादीगण की और से।

न्यायालय द्वारा निणर्य दिया गया -

रंजन गोगोई , न्यायाधिपति 1- वाद संपत्ति में पुरुलिया नगर पालिका, जिला पुरुलिया, पश्चिम बंगाल के अंतर्गत थाना लेन पर होल्डिंग नंबर एल-395 द्वारा कवर की गई भूमि और भवन शामिल हैं।

2- निम्नलिखित वंशावली तालिका को तत्काल संदर्भ और तथ्यों की स्पष्टता के लिए निर्धारित किया जा सकता है जिन पर ध्यान देना आवश्यक होगा।

जगन्नाथ जोशी = मोनी देबी

(मृत्यु अक्टूबर 1953) (मृत्यु अगस्त 1963)

———————————————

¦ ¦

बृजलाल शेवड़ा= गोमती देबी सीताराम जोशी = किशोरी देबी जोशी

(बेटी) (दत्तक पुत्र-1942) (मूल वादी)

(मृत्यु 1967) (मृत्यु 1946) 1945 में सीताराम से विवाह)

(मृतक के बाद से)

¦ ¦

राजेंद्र प्रसाद शेवदा ओम प्रकाश शर्मा उर्फ जोशी

(कथित तौर पर दत्तक पुत्र) (दत्तक पुत्र)

(प्रतिवादी संख्या 1) (याचिकाकर्ता संख्या 1)

3. मूल वादी, किशोरी देबी जोशी (मृतक के बाद से) के अनुसार, मुकदमा संपत्ति जगन्नाथ जोशी ने अपनी पत्नी मोनी देबी के नाम पर अपने धन से खरीदी थी। वादी के अनुसार, मोनी देबी, नाम ऋणदाता थी, हालांकि नगरपालिका और भूमि राजस्व रिकॉर्ड में मोनी देबी का नाम मुकदमे की संपत्ति के मालिक के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त प्रविष्टियाँ मात्र दिखावा थीं। वादी ने आगे दलील दी कि वह किसी सीताराम जोशी की पत्नी है, जिसे वर्ष 1942 में जगन्नाथ जोशी और मोनी देबी ने गोद लिया था। वर्ष 1945 में सीताराम जोशी और मृत वादी किशोरी देबी जोशी की शादी के कुछ महीनों बाद सीताराम जोशी की मृत्यु हो गई। वादी के अनुसार, वाद संपत्ति के मालिक जगन्नाथ जोशी की वर्ष 1953 में मृत्यु हो गई और उनकी मृत्यु पर, वाद संपत्ति का आधा हिस्सा उनकी पत्नी मोनी देबी को और शेष आधा मृत वादी को पूर्व मृत बेटे की विधवा के रूप में

हस्तांतरित कर दिया गया। वादी ने आगे दलील दी कि मोनी देबी की वर्ष 1963 में मृत्यु हो गई और उनकी मृत्यु पर मुकदमे की संपत्ति में उनका आधा हिस्सा उनकी बेटी गोमती देबी को हस्तांतरित हो गया। वर्ष 1967 में गोमती देबी की मृत्यु पर संपत्ति में उनका आधा हिस्सा मूल/मृत वादी किशोरी देबी जोशी को हस्तांतरित हो गया। तदनुसार, वादी संपूर्ण वाद संपत्ति का पूर्ण स्वामी बन गया। इस संबंध में, वादी ने आगे दलील दी कि प्रतिवादी संख्या 1 राजेंद्र प्रसाद शेवदा, जिन्होंने खुद को गोमती देबी का दत्तक पुत्र होने का दावा किया था, के पास ऐसा कोई दावा करने का कोई आधार नहीं था क्योंकि ऐसा कोई गोद नहीं लिया गया था।

4. प्रतिवादी ने दायर किए गए लिखित कथनों में, वादी के दावे पर विवाद किया और दावा किया कि यद्यपि मुकदमा संपत्ति जगन्नाथ जोशी के धन से खरीदी गई थी, लेकिन उक्त खरीद मोनी देबी के लाभ के लिए की गई थी ताकि उसे जीवन में आवश्यक सुरक्षा प्रदान की जा सके। क्योंकि उस समय एक हिंदू विधवा किसी हिंदू पुरुष की मृत्यु के बाद उसके स्वामित्व वाली संपत्ति के पूर्ण स्वामित्व की हकदार नहीं थी। प्रतिवादी ने मूल वादी के इस दावे पर भी विवाद किया कि सीताराम जोशी, जगन्नाथ और मोनी देबी के दत्तक पुत्र थे और इस संबंध में दावा किया था कि कोई वैध दत्तक ग्रहण नहीं था, जैसा कि दावा किया गया है। प्रतिवादी के अनुसार अगस्त 1963 में मोनी देबी की मृत्यु पर पूरी संपत्ति उनकी बेटी गोमती देबी को हस्तांतरित हो गई और गोमती देबी की मृत्यु पर संपत्ति

संख्या 1 राजेंद्र प्रसाद शेवदा को हस्तांतरित हो गई, जो गोमती देबी के दत्तक पुत्र थे। इस संबंध में प्रतिवादी ने यह भी दलील दी

थी कि गोमती देबी द्वारा अपने जीवनकाल के दौरान अपने दत्तक पुत्र यानी संख्या 1 के पक्ष में एक उपहार विलेख निष्पादित किया गया था।

5. विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने, उसके समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों पर, यह निष्कर्ष दिया कि संपत्ति जगन्नाथ की थी और मूल वादी के पूर्व मृत पति, सीताराम जोशी का गोद लेना कानूनी और वैध था। इसलिए, विद्वान विचारण न्यायालय ने माना कि 1953 में जगन्नाथ जोशी की मृत्यु पर मुकदमे की संपत्ति मोनी देबी और मूल वादी जो पूर्व मृत बेटे की विधवा थी, को समान अनुपात में हस्तांतरित कर दी गई। इसके बाद, विद्वान अधीनस्थ न्यायालय के अनुसार, मोनी देबी की मृत्यु पर संपत्ति में उसका आधा हिस्सा गोमती देबी को हस्तांतरित हो गया। विचारण न्यायालय ने आगे कहा कि वर्ष 1967 में गोमती देबी की मृत्यु पर संपत्ति में उनका आधा हिस्सा उनके दत्तक पुत्र संख्या 1 को हस्तांतरित हो गया। तदनुसार, वादी और प्रतिवादी संख्या 1 को मुकदमे की संपत्ति में समान हिस्सों का हकदार माना गया।

6. प्रतिवादी संख्या 1 ने उक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की । मूल वादी ने डिक्री के उस हिस्से के खिलाफ प्रति आपत्तियां दायर कीं, जिसके अनुसार उसे मुकदमे की संपत्ति में पूरा हिस्सा देने से इनकार कर दिया गया था। अपील के लंबित रहने के दौरान, मूल वादी किशोरी देबी जोशी की मृत्यु हो गई और उनकी जगह उनके दत्तक पुत्र ओम प्रकाश शर्मा ने ले ली, जो हमारे सामने अपीलकर्ता हैं।

7. उच्च न्यायालय, विचारार्थ उत्पन्न होने वाले मुद्दों और रेकॉर्ड पर मौजूद तथ्यों और सामग्रियों पर व्यापक विचार करने के बाद, आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांक 4.11.2008 के द्वारा, इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि जगन्नाथ द्वारा बेनामी संपत्ति खरीद नहीं की गई थी। वह मोनी देबी जिसके फायदे के लिए संपत्ति खरीदी गई थी, वही उसकी असली मालकिन थी। उच्च न्यायालय ने आगे निर्धारित किया कि सीताराम जोशी को गोद लेना साबित नहीं हुआ था और इसलिए 1963 में मोनी देबी की मृत्यु पर संपूर्ण मुकदमे की संपत्ति उनकी बेटी गोमती देबी को हस्तांतरित हो गई थी। उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 1 राजेंद्र प्रसाद शेवदा के गोद लेने की वैधता या गोमती देबी द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित उपहार विलेख की वैधता के मुद्दे पर इस आधार पर विचार करना आवश्यक नहीं समझा कि गोमती देबी की वर्ष 1967 में मृत्यु हाेने पर मूल वादी के पास संपत्ति पर कोई निर्वाह अधिकार नहीं था। इस संबंध में यह भी देखा जाना

चाहिए कि उक्त निष्कर्ष उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर दर्ज किया गया था कि यद्यपि मूल वादी के पति सीताराम जोशी, जगन्नाथ जोशी के दत्तक पुत्र नहीं थे, लेकिन उक्त सीताराम जोशी जगन्नाथ (भाई के बेटे) के भतीजे और जगन्नाथ के भतीजे की पत्नी के रूप में मूल वादी मोनी देबी की संपत्ति के लिए कानूनी रूप से हकदार उत्तराधिकारी होने के विचार के दायरे में नहीं आया था ऐसा इसलिए पाया गया क्योंकि अन्य कानूनी उत्तराधिकारी थे जिनके पास बेहतर/तरजीह अधिकार था। तदनुसार, प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा प्रस्तुत की गई अपील की स्वीकृति दी गई और वादी द्वारा दायर की गई प्रति-आपत्तियां खारिज कर दी गईं, इससे व्यथित होकर वादी द्वारा वर्तमान अपीलें दायर की गई हैं।

8. वर्तमान अपीलों में विचार के लिए नीचे दिए गए तीन प्रश्न उठते हैं -

(1) क्या मुक़दमे की संपत्ति जगन्नाथ जोशी की थी या उनकी पत्नी मोनी देबी की थी?

(2) क्या सीताराम जोशी कानूनी तौर पर जगन्नाथ जोशी और मोनी देबी के दत्तक पुत्र थे?

(3) क्या प्रतिवादी नंबर 1 राजेंद्र प्रसाद शेवड़ा कानूनी रूप से गोमती देबी के दत्तक पुत्र थे और क्या गोमती देबी द्वारा प्रतिवादी नंबर 1 के पक्ष में निष्पादित उपहार विलेख कानूनी और वैध था?

9. हमने अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री प्रणब कुमार मुल्लिक और उत्तरदाताओं के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री एम एन कृष्णमणि को सुना है।

10. पति द्वारा अपनी पत्नी के नाम से संपत्ति क्रय किया जाना बेनामी क्रय की वह शाखा है जो लंबे समय से भारत में प्रचलित प्रथा है, ऐसी प्रथा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम एवं इसमें समय-समय पर किये गए संशोधनों तक हिन्दू महिला के उत्तराधिकार की स्थिति को देखते हुए प्रचलित होना प्रकट है। इस स्थिति में जहां हिन्दू विधवा के उसके मृतक पति की संपदा पर हिन्दू महिला के संपत्ति पर अधिकार अधिनियम, 1937 के प्रावधानानुसार सीमित अधिकार रहे हैं, पति द्वारा अपनी पत्नी के नाम उसके जीवन को पति की मृत्यु के बाद सुरक्षित करने हेतु अचल संपत्ति क्रय किया जाना भारतीय जीवन में स्वीकृत एवं अभिस्वीकृत रहा है, जिसको बेनामी अंतरण (निषेध) अधिनियम, 1988 की उपधारा 3 के स्पष्टीकरण से भी पहचाना गया है। यह एक मूलभूत विशेषता है जिसे अन्य तथ्यों और परिस्थितियों के साथ-साथ एक पति द्वारा अपनी पत्नी के नाम पर अचल संपत्ति की बिक्री/खरीद लेनदेन की प्रकृति का निर्धारण करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अनिवार्य रूप से तथ्य का प्रश्न क्या है, अर्थात् क्या संपत्ति बेनामी खरीदी गई है। लेन-देन की प्रकृति के निर्धारण की प्रक्रिया में जिन "अन्य" प्रासंगिक परिस्थितियों को शामिल किया जाना चाहिए, वे जयदयाल पोद्दार (मृत) एल.और व अन्य. बनाम

एमएसटी बी.बी. हजरा व अन्य के माध्यम से जिसे उपयोगी रूप से नीचे निकाला जा सकता है:-

> "6. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यह साबित करने का भार कि कोई विशेष बिक्री बेनामी है और स्पष्ट खरीदार वास्तविक मालिक नहीं है, हमेशा ऐसा दावा करने वाले व्यक्ति पर रहता है। इस भार को एक निश्चित चरित्र के कानूनी सबूत प्रकट कर निश्चायकता से मुक्त किया जाना चाहिए जो या तो सीधे तौर पर बेनामी के तथ्य को साबित करेगा या उस तथ्य का अनुमान लगाने के लिए त्रुटिहीन और उचित रूप से परिस्थितियों को स्थापित करेगा। बेनामी का सार संबंधित पक्ष या पक्षकारों का इरादा है और यह अक्सर नहीं होता है कि ऐसा इरादा एक मोटे पर्दे में छिपा होता है जिसे आसानी से भेदा नहीं जा सकता। लेकिन ऐसी कठिनाइयाँ लेन-देन को बेनामी होने का दावा करने वाले व्यक्ति को उस पर आने वाली गंभीर जिम्मेदारी के किसी भी हिस्से से राहत नहीं देती हैं; न ही प्रमाण के विकल्प के रूप में मात्र अनुमानों या अनुमानों को स्वीकार करने को उचित ठहराते हैं। इसका कारण यह है कि एक विलेख काफी विचार-विमर्श के बाद तैयार किया गया और निष्पादित किया गया एक गंभीर दस्तावेज है, और जिस व्यक्ति को

विलेख में क्रेता या अंतरिती के रूप में स्पष्ट रूप से दिखाया गया है, वह अपने पक्ष में प्रारंभिक धारणा से शुरू करता है कि मामलों की स्पष्ट स्थिति ही वास्तविक स्थिति है। यद्यपि मामले में यह प्रश्न, कि कोई विशेष बिक्री बेनामी है या नहीं, काफी हद तक तथ्य पर आधारित है, और इस प्रश्न का निर्धारण करने के लिए, सभी स्थितियों में समान रूप से लागू होने वाला कोई पूर्ण सूत्र या समान रूप से लागू होने वाला परीक्षण निर्धारित नहीं किया जा सकता है; फिर भी संभावनाओं को तौलने और प्रासंगिक संकेत इकट्ठा करने में, अदालतें आमतौर पर इन परिस्थितियों द्वारा

निर्देशित होती हैं: (1) वह स्रोत जहां से खरीद का पैसा आया; (2) खरीद के बाद संपत्ति की प्रकृति और कब्ज़ा; (3) लेन-देन को बेनामी रंग देने का मकसद, यदि कोई हो; (4) पक्षकारों की स्थिति और दावेदार और कथित बेनामीदार के बीच संबंध, यदि वह कोई भी हो; (5) बिक्री के बाद स्वामित्व-विलेखों की अभिरक्षा और (6) बिक्री के बाद संपत्ति से निपटने में संबंधित पक्षों का आचरण।

उपरोक्त संकेत संपूर्ण नहीं हैं और उनकी प्रभावकारिता प्रत्येक मामले के तथ्यों के अनुसार भिन्न होती है। फिर भी

संख्या 1 अर्थात वह स्रोत, जहां से खरीद का पैसा आया, यह निर्धारित करने के लिए अब तक का सबसे महत्वपूर्ण परीक्षण है कि क्या एक व्यक्ति के नाम पर की गई बिक्री वास्तव में दूसरे के लाभ के लिए है" (जोर हमारा है)

11. उपरोक्त सिद्धांतों की पुनरावृत्ति बीनापानी पॉल बनाम प्रतिमा घोष और अन्य[2] में की गई है । व्यक्त किए गए विचारों का प्रासंगिक हिस्सा (पैरा 26 और 27) इस स्तर पर लाभप्रद रूप से याद किया जा सकता है।

"26. दोनों पक्षों के विद्वान वकील ने ठाकुर भीम सिंह बनाम ठाकुर कान सिंह में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है जिसमें यह माना गया है कि लेनदेन का वास्तविक चरित्र उस व्यक्ति के इरादे से नियंत्रित होता है जिसने खरीद के पैसे का योगदान दिया था और उसका इरादा क्या था, इस प्रश्न का निर्णय निम्न द्वारा किया जाना है:

(ए) आसपास की परिस्थितियाँ,

(बी) पक्षकारों का संबंध,

(सी) लेन-देन को पूरा करने में उनकी कार्रवाई को नियंत्रित करने वाले उद्देश्य, और

(डी) उनका बाद का आचरण।

27. बताए गए सभी चार कारकों पर संचयी रूप से विचार करना चाहिए। दोनों पक्षों के बीच संबंध पति-पत्नी का था। लेन-देन का प्राथमिक उद्देश्य

पत्नी और सात नाबालिग बेटियों की सुरक्षा का था क्योंकि वे उस समय प्रचलित कानून द्वारा संरक्षित नहीं थे। प्रासंगिक समय पर प्राप्त की गई कानूनी स्थिति को मौजूदा विशिष्ट परिस्थितियों और डॉ. घोष के आचरण को साबित करने के लिए एक प्रासंगिक कारक माना जा सकता है, जो उनके पंजीकृत पावर ऑफ अटॉर्नी पर हस्ताक्षर करने से प्रदर्शित होता है।"

12. उपरोक्त सिद्धांतों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करने पर हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने में पूरी तरह से उचित था कि संपत्ति हालांकि जगन्नाथ के धन से खरीदी गई थी, लेकिन वास्तव में उसकी विधवा मोनी देबी के लाभ के लिए खरीदी गई थी। मोनी देबी संपत्ति का असली स्वामिनी थी। इस संबंध में नगरपालिका और भू-राजस्व अभिलेखों में मोनी देबी के नाम की प्रविष्टियाँ; यह तथ्य कि जगन्नाथ के भाई अब जीवित

नहीं थे (वादी के अनुसार संपत्ति को अपने भाइयों से बचाने के लिए जगन्नाथ ने अपनी पत्नी के नाम पर खरीदी थी) प्रासंगिक तथ्यों को उच्च न्यायालय द्वारा सही ढंग से ध्यान में रखा गया है। तथ्य यह है कि संपत्ति का प्रबंधन जगन्नाथ द्वारा किया जाता था, जो हिंदू परिवार में प्रचलित प्रथा के अनुरूप है जहां पति आमतौर पर पत्नी की संपत्ति की देखभाल और प्रबंधन करता है, यह एक और प्रासंगिक परिस्थिति है जिस पर उच्च न्यायालय ने ध्यान दिया था। निष्कर्ष यह है कि उक्त सभी स्थापित तथ्य मोनी देबी द्वारा संपत्ति के स्वामित्व के साथ पूरी तरह से सुसंगत हैं। वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए उपरोक्त दृष्टिकोण को कनकरथनम्मल बनाम एस.लोगनाथ मुदलियार और अन्य मामले में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से पर्याप्त समर्थन मिलता है। जिसका प्रासंगिक भाग नीचे दिया गया है:

> "यह सच है कि संपत्ति का वास्तविक प्रबंधन अपीलकर्ता के पिता द्वारा किया गया था; लेकिन यह अनिवार्य रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए होगा कि सामान्य हिंदू परिवारों में, विशेष रूप से महिला सदस्य की संपत्ति का प्रबंधन भी सामान्य रूप से परिवार के प्रबंधक द्वारा किया जाएगा; ताकि यह तथ्य कि अपीलकर्ता की मां ने संपत्ति के प्रबंधन में वास्तविक भाग नहीं लिया,

अपीलकर्ता के मामले को भौतिक रूप से प्रभावित नहीं करेगा कि संपत्ति उसकी मां की थी। किराया किरायेदारों द्वारा भुगतान किया गया था और अपीलकर्ता के पिता द्वारा स्वीकार किया गया था; लेकिन यह, फिर से, एक अविभाजित हिंदू परिवार में ऐसे मामलों में आम तौर पर जो होता है उसके अनुरूप होगा। यदि संपत्ति पत्नी की है और पति उसकी ओर से संपत्ति का प्रबंधन करता है, तो

यह तर्क देना व्यर्थ होगा कि संपत्तियों का पति द्वारा प्रबंधन उक्त संपत्तियों पर उसकी पत्नी के स्वामित्व के साथ असंगत है। संपत्तियों के प्रबंधन के बारे में हमने जो कहा है वह संपत्तियों के वास्तविक कब्जे के बारे में भी उतना ही सच होगा, क्योंकि भले ही पत्नी संपत्तियों की मालिक हो, सुविधा के तौर पर कब्जा पति के पास ही जारी रह सकता है। हम इस बात से संतुष्ट हैं कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता के पिता द्वारा उसकी पत्नी के संपत्ति के स्वामित्व के संबंध में की गई कई स्वीकारोक्ति के प्रभाव की सही ढंग से सराहना नहीं की। इसलिए, हम मानते हैं कि संपत्ति अपीलकर्ता की मां द्वारा अपने नाम पर खरीदी गई थी, हालांकि उक्त लेनदेन के लिए उनके द्वारा भुगतान किया गया भुगतान उन्हें अपने पति से प्राप्त हुआ था।" (अंडरलाइनिंग हमारी है)

13. उपरोक्त के आधार पर, हमारे पास उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष से असहमत होने का कोई कारण नहीं है कि संपत्ति का स्वामित्व मोनी देबी के पास था, हालांकि इसके लिए प्रतिफल राशि उनके पति, जगन्नाथ द्वारा उपलब्ध कराई गई हो सकती है।

14. निर्णय लिया जाने वाला अगला प्रश्न मूल वादी के पति, सीताराम के गोद लेने की वैधता/वैधता का है, जैसा कि मुकदमे में वादी द्वारा दावा किया गया है। इस न्यायालय ने, लगभग 5 दशक पहले, निम्नलिखित शर्तों में गोद लेने के दावे पर निर्णय लेते समय अदालतों द्वारा अपनाई जाने वाली सावधानी की चेतावनी दी थी:

> "चूंकि गोद लेने के परिणामस्वरूप उत्तराधिकार की दिशा बदल जाती है, पत्नियों और बेटियों को उनके अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है और संपत्तियों को तुलनात्मक अजनबियों या अधिक दूर के रिश्तेदारों को हस्तांतरित कर दिया जाता है, इसलिए यह आवश्यक है कि इसका समर्थन करने के लिए सबूत ऐसे होने चाहिए जो धोखाधड़ी के सभी संदेह से मुक्त हों और इतना सुसंगत और संभावित कि इसकी सत्यता पर संदेह करने का कोई अवसर ही न बचे।"

ओम प्रकाश शर्मा उर्फ ओ.पी.जोशी बनाम राजेंद्र प्रसाद शेवदा और

(रंजन गोगोई न्यायाधिपति)

15. रहाशा पंदनी जरिए एल.रु. व अन्य बनाम गोकुलानंद पांडा व अन्य में उपरोक्त सिधान्तों को दोहराते हुए इस न्यायालय ने मामले को निम्नलिखित शब्दों में आगे बढ़ाया:

> "जब वादी इस दावे के समर्थन में मौखिक साक्ष्य पर भरोसा करता है कि उसे दत्तक पिता द्वारा हिंदू संस्कारों के अनुसार गोद लिया गया था, और यह स्थापित करने के लिए कि इस तरह का वास्तव में गोद लेना किसी भी पंजीकृत दस्तावेज़ द्वारा समर्थित नहीं है अदालत को बहुत सावधानी और सतर्कता से काम करना होगा। इस बात का एहसास हो कि नकली गोद लेने की योजना बनाना नकली वसीयत गढ़ने से कम नहीं है, और समान रूप से पोल खोलना कठिन नहीं है और अदालत को उन षडयंत्रकारियों जो संपत्ति की लालसा के कारण बेईमान गतिविधियों में लिप्त हैं के जाल में फंसने से बचाने के लिए बेहद सतर्क और सतर्क रहना होगा। यदि कोई संदिग्ध परिस्थितियाँ हैं, तो जिस तरह वसीयत का प्रस्तावक संदेह के बादल को दूर करने के लिए बाध्य है, उसी तरह उसे उचित संदेह से परे दूर करने की जिम्मेदारी उस व्यक्ति पर है जो दावा करता है। ऐसे गोद लेने के मामले में, जो किसी पंजीकृत दस्तावेज़ या निर्णायक प्रकृति के किसी अन्य साक्ष्य द्वारा समर्थित

नहीं है, यदि संदिग्ध परिस्थितियाँ मौजूद हैं, तो इसे उस पक्ष द्वारा अदालत की अंतरात्मा की संतुष्टि के लिए समझाया जाना चाहिए, जो यह तर्क दे रहा है कि ऐसी गोद ली गई थी और ऐसी स्थिति है कि गोद लेने से उत्तराधिकार की सामान्य और प्राकृतिक प्रक्रिया बदल जाएगी। जीवन के अनुभव से पता चलता है कि जिस तरह वसीयत के निष्पादन के बारे में झूठे दावे किए गए हैं, उसी तरह गोद लेने के बारे में भी झूठे दावे किए गए हैं और इसलिए अदालत को गोद लेने के दावे को बरकरार रखने में शामिल जोखिम के बारे में जागरूक होना चाहिए यदि ऐसी परिस्थितियां हैं जो अदालत के संदेह को जन्म देती हैं और अदालत की अंतरात्मा इस बात से संतुष्ट नहीं है कि इस तरह के गोद लेने का समर्थन करने के लिए पसंदीदा सबूत निंदा से परे हैं।"

16. उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए ही हमें वर्तमान मामले में आगे बढ़ना होगा।

17. वादी स्वयं रुक्मिणी जोशी (पीडब्लू 2) के साथ गवाह हैं जिन्होंने जगन्नाथ द्वारा सीताराम को गोद लेने के दावे के समर्थन में गवाही दी है। उपरोक्त दो गवाहों की गवाही को तीन अन्य व्यक्तियों (मृतक

के बाद से) के बयानों से जिन्होंने दूसरे मुकदमे औरएस नंबर 206/1967 जो प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर किया गया था, में किरायेदारों में से एक के खिलाफ जो मुकदमे की संपत्ति के एक हिस्से पर काबिज था, में इस विषय पर गवाही दी थी, से पुष्ट करने की कोशिश की है। उपरोक्त तीनों गवाहों यानी नेथ राम खेड़िया, सिब प्रसाद राजगोरिया और सदायी देवी ने उपरोक्त मुकदमे में गवाही दी है कि सीताराम को जगन्नाथ ने गोद लिया था।

18. उपरोक्त साक्ष्य के अलावा मेसर्स बिसंदयाल रामजीवन (Exb.2) के लेटरहेड पर दिनांक 20.7.1945 को जगन्नाथ सीताराम द्वारा लिखा एक पत्र भी है। वादी की ओर से आग्रह किया गया है कि पुरुलिया से भेजे गये उक्त पत्र से पता चलता है कि सीताराम, जगन्नाथ के दत्तक पुत्र थे, क्योंकि पत्र भेजने वाले को जगन्नाथ सीताराम बताया गया है.

19. पीडब्लू-2 रुक्मिणी जोशी की साक्ष्य पर समग्र रूप से विचार करने से हमें संतुष्टि मिलती है कि कुछ अंतर्निहित विसंगतियों के मद्देनजर उक्त गवाह की गवाही स्वीकार करने योग्य नहीं है। विशेष रूप से, पीडब्लू-2 ने हालांकि कहा था कि सीताराम को गोद लेने की प्रक्रिया 40 साल पहले हुई थी, लेकिन उसे अपनी उम्र याद नहीं है; उसे गोद लेने से पहले के वर्षों की कोई याद नहीं थी जब उसकी शादी हुई थी और वह यह भी याद नहीं कर पा रही थी कि उसके बेटों की शादी कब हुई थी और सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि शादी के समय उसके बड़े बेटे की उम्र कितनी

थी; बड़े बेटे की वर्तमान आयु या वर्तमान कैलेंडर वर्ष भी वह बताने में असमर्थ रही है। औरएस संख्या 206/1967 (विस्तार 17, 17ए और 17सी) में जांचे गए तीन गवाहों के साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(5) और (6) के तहत अस्वीकार्य होंगे क्योिंकि उक्त साक्ष्य पेश करने से पूर्व ही सीताराम को गोद लेने के संबंध में विवाद उत्पन्न हो चुका था। उपरोक्त प्रश्न यानी संबंधित साक्ष्य की स्वीकार्यता का निष्कर्ष इस न्यायालय द्वारा कालिंदी वेंकट सुब्बाराजू और अन्य बनाम चिंतालपति सुब्बाराजू और अन्य के मामले में व्यक्त किए गए विचारों से होगा, जिसमें पैरा 12 (नीचे उद्धृत) में यह स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है कि, " साक्ष्य में गाह्य किये गये कथनों पर भरोसा किये जाने से पूर्व जो व्यक्ति जीवित नहीं है उनके द्वारा वास्तविक एवं कानूनी रूप से समान बिन्दुआेंं पर किये गये कथन विवाद शुरू होने से पहले किये गये कथन एंटो लिटेम मोटाम के आधार पर दिये गए हैं पर ध्यान देना चाहिए। उसी पृष्ठभूमि में एंटे लिटम मोटाम का सिद्धांत जैसा कि हैल्सबरी के इंग्लैंड के कानून, तीसरे संस्करण के खंड 15 पृष्ठ 308 पर में कहा गया है।

> "12. जहां तक सूर्यम्मा के लिखित बयान का सवाल है तो उसमें उसकी घोषणा की स्थिति कुछ अलग है। धारा 32 की दोनों उपधारा 5 और 6, जैसा कि पूर्वोक्त कहा गया है, घोषित करती है कि स्वीकार्य होने के लिए जिस बयान पर भरोसा किया गया है, उसे उन व्यक्तियों द्वारा पूर्व में लाया

जाना चाहिए जो मर चुके हैं यानी किसी भी विवाद के शुरू होने से पहले उसी बिंदु पर वास्तविक या कानूनी. शब्द "मुद्दे में प्रश्न उठाए जाने से पहले" का अर्थ आवश्यक रूप से उस विशेष मुकदमे में उठाए जाने से पहले नहीं है जिसमें इस तरह के बयान को साक्ष्य के रूप में पेश करने की मांग की गई है। जिस सिद्धांत पर यह प्रतिबंध आधारित है, उसे हल्सबरी के इंग्लैंड के कानून, तीसरे संस्करण वॉल्यूम. 15, पृ.308 में इन शब्दों में संक्षेप में बताया गया है:

"पूर्वाग्रह को दूर करने के लिए घोषणाओं को पहले से तैयार किया जाना आवश्यक है, जिसका अर्थ न केवल कानूनी कार्यवाही शुरू होने से पहले है, बल्कि घोषणाओं के विषय-वस्तु से संबंधित किसी भी वास्तविक विवाद के अस्तित्व से पहले भी है"।

20. पत्र दिनांक 20.7.1945 (Exb.2) से सीताराम को गोद लेने के संबंध में कोई स्पष्ट/ठोस निष्कर्ष नहीं निकला है और उच्च न्यायालय द्वारा इसे सही ढंग से खारिज कर दिया गया था। तथ्यों के उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में वादी के अपने पति को गोद लेने के संबंध में सबूत अलग-थलग हैं और अपने आप में यह सकारात्मक निष्कर्ष नहीं निकाल सकते हैं कि उसके पति सीताराम को जगन्नाथ ने गोद लिया था। यदि मुकदमे की संपत्ति का

स्वामित्व मोनी देबी के पास था, न कि जगन्नाथ के पास और सीताराम मोनी देबी और जगन्नाथ के दत्तक पुत्र नहीं थे, तो यह माना जाना चाहिए कि मोनी देबी की मृत्यु पर मुकदमे की संपत्ति गोमती को हस्तांतरित हो गई। प्रतिवादी संख्या 1 के गोमती के दत्तक पुत्र होने के दावे को केवल ऐसे कानूनी उत्तराधिकारियों द्वारा चुनौती दी जा सकती थी, जिन्हें प्रतिवादी संख्या 1 के गोद लेने की स्थिति में गोमती की मृत्यु के बाद संपत्ति हस्तांतरित हो जाती। इस संदर्भ में, यदि प्रतिवादी संख्या 1 के गोद लेने को अवैध माना जाता है तो अगला कानूनी उत्तराधिकारी जो गोमती देबी की संपत्ति का उत्तराधिकारी होता, वह मूल वादी नहीं होगा क्योंकि कोई अन्य उत्तराधिकारी था जो दावा कर सकता था अमान्य माना गया।। ऐसी स्थिति में एक बेहतर शीर्षक, अर्थात्, एक चौथमल शर्मा, जो कि सीताराम के एक भाई का बेटा था। उपरोक्त कानूनी उत्तराधिकारी, जिसके पास बेहतर/तरजीही दावा था, द्वारा ऐसी कोई चुनौती नहीं दी गई थी।

21. रिकॉर्ड पर साक्ष्य द्वारा प्रदर्शित उपरोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 को गोद लेने की वैधता के मुद्दे या गोमती द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित उपहार विलेख को निरर्थक/अप्रत्याशित होने से उक्त मुद्दों के रूप में दर्ज न करना पूरी तरह से ऊपर उल्लिखित कारणों से उचित था।

22. उपरोक्त सभी कारणों से और जो पाया गया है और जैसा कि ऊपर कहा गया है, उसके आलोक में, हमें यह मानना होगा कि ये अपीलें

बिना किसी योग्यता के हैं। तदनुसार, उच्च न्यायालय के आदेश की पुष्टि की जाती है और वर्तमान अपीलें खारिज की जाती हैं। हालाँकि, खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

अपीलें खारिज की जाती हैं।

यह अनुवाद और्टिफिशियल इंटलिजेंस टूल ‘‘सुवास’’ की सहायता से अनुवादक सुरेंद्र कुमार (और.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकारों को उनकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है। इसे अन्य किसी उद्देश्य के लिए उपयोग में नही लिया जा सकता। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।